द्वितीय अध्याय

आँचलिक उपन्यास साहित्य की विशेषताएँ --

प्रास्ताविक

१) 'आँचल' शब्द की परिभाषाएँ

२) 'आँचल' शब्द की व्युत्पत्ति

३) उपन्यासों में आँचलिक प्रवृत्ति

४) आँचलिक उपन्यास के तत्व

५) आँचलिक उपन्यास की विशेषताएँ

निष्कर्ष ।

द्वितीय अध्याय

` आँचलिक उपन्यास साहित्य की विशेषताएँ `

प्रास्ताविक --

` अँचल ` शब्द का या अंग्रेजी के (Region) शब्द का प्रयोग सामान्यत: किसी क्षेत्र या ग्राम के सीमान्त प्रदेश के लिए किया जाता है। जब किसी परिवार क्षेत्र विशेषा या ` अँचल ` को लेकर लिखी जानेवाली पध्दति आरंभ हुई है। तब आँचलिकता शब्द विशेषा अर्थ ग्रहण करने लगा। छोटी-छोटी आँचलिक कथा, साहित्य की एक विधा के रूप में प्रचलित हुई। इसी प्रक्रिया में वह सामान्य अर्थ को त्यागकर विशेषा संदर्भ में प्रयुक्त होने लगी। जिसप्रकार अंग्रेजी शब्द (Regional) अपने प्रादेशिक विस्तार को समेटकर साहित्य में एक विशेषा अर्थ में प्रयुक्त होता है। उपन्यास की विशेषाता के साथ यह उपन्यास के शिल्प और शैलीगत सीमाओं को निर्धारित करता है। हिन्दी में आँचलिक उपन्यास के संदर्भ में उसके कथा, भाषा-शैली और शिल्पगत विशेषाताओं को प्रकाशित करता है। इन कतिपय गुणों की साम्यता के आधार पर हिन्दी का ` आँचलिक ` यह शब्द अंग्रेजी के (Regional) शब्द के निकट आ जाता है। उपन्यास की इस स्वतंत्र विधा को किसी निश्चित परिभाषा में बाँधना कठिन है किन्तु विद्वानों ने उसकी विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की है।

(१) ` अँचल ` शब्द की परिभाषा --

हलायुध कोश के अनुसार ` अँचल ` का व्युत्पत्यर्थ होता है -` वस्त्र का भाग अथवा छोर ।`[१]

---

१ सम्पा. जयशंकर जोशी -` हलायुध कोश ` - पृ.१११।

(२) संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी --

" इस डिक्शनरी में इसका आशय वस्त्र के (विशेषाकर स्त्रियों के) छोर से लिया गया है । " [१]

(३) ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी --

" इसमें ' रीजन ' प्राकृतिक विशिष्ठता रखनेवाला भूभाग माना गया है । " [२]

(४) हिन्दी शब्द सागर --

" साडी वा ओढनी का वह भाग जो सिर अथवा कन्धेपर से होता हुआ सामने छातीपर फैला हुआ हो । साडी का छोर । आँचल । पल्ला । अंचरा । अन्य अर्थ इसप्रकार दिए गए है -- किनारा, तट, तलहटी, घाटी, किसी प्रदेश या स्थान आदि का भाग । (वन, गुहा) " [३]

(५) प्रामाणिक हिन्दी कोश --

१) साडी या चादर का सिरा । पल्ला ।

२) सीमा के पास का प्रदेश ।

३) किनारा, तट । " [४]

संक्षेप में, हिन्दी शब्द कोशों में संस्कृत के आधार पर वस्त्र के भाग तथा अंग्रेजी कोशों के अनुसार भूभाग विशेषा ये दोन अर्थ विशेषा रूप में दिए गए है ।

(२) ' अँचल ' शब्द की व्युत्पत्ति --

' अँचल ' शब्द का व्यत्पत्तिमूलक अर्थ परिभाषाओं में देख चुके है । साथ-ही-

---

१ सम्पा - सर मौनियर विलियम - संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी- पृ.११ ।

२ The Oxford English Dictionary - Vol.VII- Page-371.

३ मुल सम्पा - श्यामसुन्दरदास - हिन्दी शब्द सागर (प्रथम भाग) पृ.१२-१३ ।

४ सम्पा - रामचंद्र वर्मा - प्रामाणिक हिन्दी कोश - पृ. ४ ।

साथ आँचलिक उपन्यासों के संदर्भ में इस शब्द को कई विद्वानों ने परिभाषित करने का प्रयास किया है। आँचलिक शब्द `अँचल` से बना है।

इससे स्पष्ट होता है कि अँचल के लिए सीमा के पास का प्रदेश या क्षेत्र यह अर्थ बिल्कुल सही है। `अँचल` यह पिछडा हुआ या कोने में पडे हुएँ भाग के अर्थ में आया है। आँचलिक उपन्यास पात्रों को प्रमुखता न देकर अँचल को अभिव्यक्ति देने में सहायक होता है। किसी अँचल का निर्माण पूर्वनियोजित नहीं होता। अँचल अपने आप ही बनते है।

संक्षेप में `अँचल` शब्द यही अर्थ बोध कराता है --`आँचलिक शब्द `अँचल` से बना है, जिसका अर्थ कोई विशेषा भूप्रदेश ,जिसकी अपनी स्थानीय और भौगोलिक विशेषाताएँ होती है। और यह अन्य प्रदेशों से अलग होता है।

(३) उपन्यासों में आँचलिक प्रवृत्ति --

आँचलिक उपन्यासों का सम्बन्ध यदि हम किसी जाने पहँचाने भौगोलिक अँचल से लगाएँगे या अन्य किसी भू-प्रदेश से तुलनात्मक अध्ययन करेंगे तो वह उसकी सच्ची परिभाषा नहीं होगी। अँचल याने केवल ग्रामीण पृष्ठभूमि का चित्रण ही नहीं है,अँचल की पहँचान के लिए उन विशेषाताओं पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है, जिससे आँचलिकता उभरी है। आँचलिक उपन्यास को स्पष्ट एवं व्यापक रूप से जानना आवश्यक है। इस दिशा में थॉमस हार्डी अंग्रेजी के ऐसे उपन्यासकार है जिनसे हमें आँचलिकता को पहँचानने की दृष्टि मिलती है। उपन्यास में `अँचल` को जीवन्त रूप देने का श्रेय इन्हीं को प्राप्त होता है। वैसे इन्हीं की परम्परा के और भी कई विद्वान लेखक है, जिन्होंने आँचलिकता को, साहित्य में विशिष्ट स्थान दिया है। अंग्रेजी के आँचलिक उपन्यासों के अन्तर्गत फिलीप बेन्टलेने कई कारणों का उद्घाटन किया है।

अंग्रेजी लैण्डस्केप का विशेषा प्रकार से चित्रण किया है। इसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि आँचलिक उपन्यास लोकतंत्र के समान है। इसमें अत्यंत साधारण

नारी तथा पुरुष प्रमुख पात्र होते है। उनके अन्तर्गत विशेषा रूप से यथार्थ, विश्वसनीय, सहानुभूतिपूर्ण जीवन का प्रस्तुतिकरण होता है। इसके अतिरिक्त अँचल के लिए विशेषाकर दूरवर्ति अनुसूचित पिछडी जन-जातियों को लेने की पध्दति रही है। तब उनके मन में किसी स्थानीय वातावरण को लेकर रचना में विशिष्ठता लाने का कोई अभिप्राय न था किन्तु बाद में आँचलिक तत्वों के होने के कारण उन्हे अन्य उपन्यासों के अन्तर्गत रखा। इसके पश्चात्य उनके लिखे हुए समस्त उपन्यासों के आधार पर यह सिध्द किया गया है कि यह हार्डी की विशिष्ठता "आँचलिकता" की परम्परा का स्वस्थ एवं स्पष्ट प्रमाण है। इसके सम्बन्ध में डॉ.आदर्श सक्सेना का मत दृष्टव्य है -- "प्रेमचंद पूर्व उपन्यास आँचलिकता के तत्वों से रहित है किन्तु उनके वातावरण चित्रण में परवर्ती आँचलिक चित्रण का प्रारंभिक रूप देखा जा सकता है।" [१]

थोडे में आँचलिकता की प्रवृत्ति हिन्दी उपन्यास साहित्य के लिए कोई नई प्रवृत्ति नहीं है, वह हिन्दी उपन्यास के प्रारंभिक काल में ही दृष्टिगोचर होने लगती है। अन्तर केवल इतना ही हैकि भारतेन्दु युग में इसका बीजवपन हुआ, प्रेमचंद युग में अंकुरण और पल्लवन हुआ प्रेमचंद युग के बाद। आँचलिक उपन्यास नाम का प्रारंभ यद्यपि रेणु के "मैला आँचल" के प्रकाशन के साथ हुआ तथापि ऐसे उपन्यासों का सृजन जिनमें अँचल विशेषा के जनजीवन का पूर्णता के साथ चित्रण है, उससे पूर्व लिखे जा चुके थे। नागार्जुन का प्रथम उपन्यास "रतिनाथ की चाची" हिन्दी का प्रथम आँचलिक उपन्यास है और नागार्जुन हिन्दी के प्रथम आँचलिक उपन्यासकार है। नागार्जुन के पहले भी हिन्दी उपन्यासों में यह प्रवृत्ति मौजुद थी तथापि उसका रूप अपरिपक्व था। इसीकारण उन्हें आँचलिक उपन्यास नहीं माना गया।

(४) <u>आँचलिक उपन्यास के तत्व --</u>

उपन्यास का एक पूरा संसार होता है। उसके इस संसार की संरचना और पूर्णता में उसके एक-एक शब्द का योगदान रहता है। यह योगदान उसको असंडित

---

१ डॉ.आदर्श सक्सेना - "हिन्दी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि - पृ.७३।

लंबाई का भी सूचक है। यह लंबाई दिशाओं में विभक्त होकर उसका शरीर वैज्ञानिक विश्लेषण भी करता है। ये सब अलग-अलग अपना महत्व रखते हैं, किन्तु इनके महत्व की सार्थकता इनके समष्टि रूप में है, जो रचना का अपना संसार बनाते हैं। उपन्यास - कला का सम्यक रूप जानने के लिए इन अंशों का अध्ययन आवश्यक है। शास्त्रीय भाषा में इन्हें उपन्यास के तत्व कहते हैं। आँचलिक उपन्यास के तत्व निम्नप्रकार से --

१) <u>आँचलिक देश, काल या वातावरण --</u>

आँचलिकता यह आँचलिक उपन्यास का मूलभूत तत्व है और यही इसके नामकरण का कारण है। उपन्यास होने के नाते उपन्यास के तत्व वे ही है, कथा चरित्र, उद्देश्य, देश, काल, वातावरण, कथोपकथन और भाषाशैली। दोनों में अंतर यह है कि इसमें प्राणतत्व अंचल का देश, काल वातावरण है। बाकी सभी तत्वों की प्रधानता विभिन्न विधाओं में परिलक्षित हो चुकी थी, जैसे कथाप्रधान, जासूसी, तिलस्मी आदि उपन्यास, चरित्र प्रधान उपन्यास, जिनका विकास मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों तक हो चुका है। उद्देश्यप्रधान, जिनका विशेष रूप प्रगतिवादी उपन्यासों में मुखरित हुआ है, शैली-प्रधान जिसमें शिल्प के अनेक प्रयोग किए गए है। इन सभी प्रकार के उपन्यासों में वातावरण तत्व ग्रहण किया गया है। परन्तु दृष्टा आधार के रूप में ही। उदाहरण के लिए कथा प्रधान उपन्यासों में जीवित यथार्थ, चरित्र प्रधान में व्यक्तित्व की सप्राण-चेतना, उद्देश्य-प्रधान में सिध्दान्त की विश्वसनीय व्याख्या तथा कला प्रधान में शिल्पगत प्रयोगों के साधन रूप देश काल का उपयोग किया है। अनेक उपन्यासकारों ने जैसे प्रेमचंदने अपने सामाजिक और वृंदावनलाल वर्मा ने ऐतिहासिक उपन्यासों में इसे महत्व प्रदान किया है परन्तु अनेक में से एक गुण के रूप में ही। आँचलिक उपन्यासों से पूर्व यह तत्व मूलभूत प्रेरणा, प्राणतत्व, साध्य तथा सारभूत प्रभाव का व्यंजक नहीं बन पाया था। देश, काल और वातावरण के सम्बन्ध में डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री जी ने कहा है --

" दोनों अवयवों को प्रभावात्मक ढंग से एक साथ, एक रस और एक रूप में प्रकट करने वाली पृष्ठभूमि है।" [१]

उपन्यास की कथा आँचलिक देश, काल में ही घटित होती है, पात्र वही जीवित है, शिल्प उसी की अभिव्यंजना का प्रयत्न है तथा वही उसका साध्य उद्देश्य है। इस उपन्यासों में अँचल विशेषा का देश, काल अथवा वातावरण एक तत्व मात्र के रूप में नहीं पूर्ण व्यक्तित्व के रूप में आता है। इस तत्व में देश प्रमुख होता है और काल अपेक्षाकृत गौण। अँचल विशेषा पर बल देने के कारण देशांचल ही प्रधान रहता है। काल अपने तीनों अंशों भूत-वर्तमान-भविष्य सहित उसे तीन कोणों से उजागर करते हुए उसके व्यक्तित्व को आयाम-युक्त पूर्णता प्रदान करता है। भूखंड को प्रोजेक्ट करने में काल का एक "कोण" मात्र बन जाता है। एक और प्रवृत्ति इसी सम्बन्ध में स्पष्ट है कि इसमें वर्तमान जीवित होने के कारण महत्वपूर्ण है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इसमें जीवित, स्थिर देशांचल काल की गतिशील धुरी पर प्रस्तुत किया जाता है। इसमें जनपदीय जीवन के वातावरण की समग्र सम्पूर्णता रहती है। इसका भौगोलिक वैशिष्टय उसके व्यक्तित्व को महत्व प्रदान करता है। दूसरी ओर उसकी आत्मा, भावानुभूति, स्वप्न कल्पना, विचार के सर्वांग सहित उसे चारित्र्य प्रदान करती है। आँचलिक जीवन के अनेक पक्ष इसमें ग्रहण किए जाते है -- अँचल का क्षेत्र, भौगोलिक स्थिति, जलवायु प्रकृति, जीवन यापन की विधि, वेशभूषा, भोजन, रहन-सहन, आय-व्यवसाय, व्यसन-मनोरंजन, लोकमनोवृत्ति, मान्यताएँ, विश्वास, सामाजिक गठन, वैचारिक क्रिया-प्रतिक्रियाएँ, सामाजिक सम्बन्ध, उत्सव पर्व, रीति-रिवाज, भाषा-उच्चारण, मनोरंजन के साधन-नृत्य, गीत, कथा, चित्र, रंगमंच आदि, धर्म-आस्था से प्रेरित अंधविश्वास, व्रत-त्योहार, भूत, भाग्य, शकुन आदि से प्रेरित जादू-टोणा आदि।

२) वस्तु और क्षेत्र --

अँचल विशेषा यह आँचलिक उपन्यास की विषायवस्तु है। प्रारंभ में यह

---

१ डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री, "उपन्यास तत्व एवं रूप-विधान" - पृ. १३०।

धारणा बनने लगी थी कि इस प्रकार के उपन्यास का अँचल ग्राम में ही सम्बन्ध होता है परन्तु इसपरम्परा के विकास से यह स्पष्ट हो चुका है कि इसे ग्राम-क्षेत्र तक सीमित नहीं किया जा सकता । इसक्षेत्र में ग्राम के साथ नगर,उपनगर,महानगर के उपक्षेत्र, कस्बे,पिछडी जातियों, वर्गों की बस्तियाँ, आदिवासी क्षेत्र, वनप्रदेश, नदी का समस्त भू-प्रसार,पर्वतीय प्रदेश,तलहटी,पठार,मैदानी भूखंड आदि अँचल रूपों में परिलक्षित हो रहे हैं । इसकी सीमा-विस्तार में भी विविधता है -- कहीं ब्रह्मपुत्रा नदी का सम्पूर्ण फैलाव है तो कहीं लखनऊ का ` चौक ` मुहल्ला मात्र ।

इस उपन्यास विधा में अँचल को सीमा-विस्तार से अधिक उसके पिछडे, अविकसित रूप को महत्व प्राप्त है । ये विशेषाण अचीन्हें,अनजाने,अनछुए के पर्याय है विकास को समसामायिक काल-गति में जो बिछुडने के कारण अविकसित रह गया है और दूसरों के लिए अपरिचित हो गया है - वह भूअँचल ही इसका आधार है ।

विषायवस्तु सम्बन्धि तीसरी विशेषाता है - सीमित - समग्रता । प्रतिपाद्य जीवन का अँचल अपनी निजी अनन्यता को अपनी सीमाओं में समेटकर ही संरक्षित रख सकता है । अत: प्रवृत्ति क्षेत्र के परिसीमन की ओर है । इसके साथ ही शर्त है समग्रता,सम्पूर्णता,सर्वांगीणता । परिसीमित म-अँचल के जीवन की सम्पूर्ण छवि इसका साध्य है । अत: अनेकानेक पक्षों और कोणों से जीवन कीसमग्रता को उभारने का प्रयत्न सभी लेखकों में दृष्टिगत हुआ है। इसका अर्थ यह नहीं है कि भौगोलिक, सांस्कृतिक,ऐतिहासिक, लोकपरम्परागत आदि अनेक तथ्यात्मक अनुसंधान कर अधिकाधिक सामग्री संकलन आँचलिक उपन्यास की सफलता की कसौटी है ।

आँचलिक उपन्यास में एक कथा नहीं होती, उसकी गति में प्रवाह नहीं होता क्योंकि अँचल के समग्र जीवन को पूरा-का-पूरा जीवित करना लेखक को अभीष्ट होता है । कथा के अन्तर्गत जीवन के अनेक तंतुओं का ताना-बाना बुना जाता है जो एक विशेषा ` पैटर्न ` बनाता है जिसमें कुछ रंग और सूत्र अधिक उभर आते है

परन्तु उस पैटर्न से अलग होकर नहीं, अन्य सभी से सम्बन्ध होकर ही । इन उपन्यासों में कथागत बिखराव का आभास होता है । समग्रता को संपंजित करने, अपने पक्षो को बाँधने का प्रयास रहता है ।

कथावस्तु का वर्णन करते समय उपन्यासकार को रचना - कौशल्य पर ध्यान देना आवश्यक होता है । साथ-ही-साथ कथा विन्यास में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण, इस उपन्यास विधा को विशेषाता है । ये उपन्यास अन्य उपन्यास की तुलना में अधिक वस्तुपरक होते हैं । कारण स्पष्ट है उपन्यासकारों की यथार्थता के प्रति प्रतिबध्दता का दावा । परिणामत: इन उपन्यासों मे वस्तुवर्णनों को गुण का परिणाम दोनों ही दृष्टि से अधिक महत्व दिया गया है । ये वस्तुवर्णन जहाँ वातावरण के सकारणात्व के लिए अनिवार्य हैं वहा कथा की गति इनकी स्थिरता से अवरुध्द हो जाती है । उपन्यासों के बदलते रुपों की ओर निर्देश करते हुए डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री ने अपने विचार प्रकट किए हैं -- ` उपन्यास की प्रवृत्ति उपदेशात्मक होने से उसमें पौराणिकता की प्रामाणिकता एवं कथा की व्याख्या के विस्तार का तथा अलौकिक विधि का आश्रय लिया गया । उपन्यासकार ` सूतोवाच ` की पध्दति पर लिखने लगा । जहाँ किशोरीलाल गोस्वामी की परम्परा ने उपन्यास के रचना-कौशल को रीतिकालीन काव्य की पध्दति पर नायिका-भेद एवं नग्न श्रृंगार के रूप में प्रस्तुत किया, वहाँ दूसरी ओर गहमरीजी के जासूसी उपन्यास थाने के मुन्शीजी के रोजनामचे की रू से रचना कौशल्य से निर्दिष्ट करने लगे । सामाजिकता के आग्रह ने उपन्यास के रचना-कौशल को गोल कमरे में बैठकर की जानेवाली बातचीत और आलोचना के रूप में ढाला । ऐतिहासिक उपन्यास कहीं-कहीं बूढों को बढ-बढ कर की गई बातों के रूप में प्रकट हुए । मनोविज्ञान की प्रवृत्ति ने अपना अलग प्रभाव रचना-कौशल पर बुरी तरह से प्रकट किया । संक्षेप में सामयिक प्रवृत्ति में परिवर्तन होने के साथ लेखक के प्रस्तुतिकरण के कौशल में भी परिवर्तन होता जाता है ।` [१]

---

१ डॉ.श्रीनारायण अग्निहोत्री ,` उपन्यास तत्व एवं रूपविधान` पृ.२३६ ।

३) पात्र तथा चरित्र-चित्रण --

आँचलिक उपन्यासों में पात्र और चरित्र-चित्रण विधान का संचालन आँचलिकता ही करती है तथा उसके प्रभाव के कारण उनमें वैशिष्टय आ जाता है। आँचलिकता की सिध्दि व्यक्ति के नहीं समाज के सामुहिक जीवन से ही सम्भव है। अत: इसमें व्यक्ति के चरित्र को नहीं, समूह-पात्रों को अंकित किया जाता है। इनमें एक नहीं,अनेक चरित्र होते है, पात्रों की बहुसंख्या समग्रता के लिए अनिवार्य प्रवृत्ति बन जाती है।

दूसरी विशेषाता यह है कि ये बहुसंख्या पात्र अँचल की सामुहिकता के अंग मात्र है, उनकी अँचल विशेषा से विशिष्ट कोई पृथक सत्ता नहीं है। ऐसे ही पात्रों को उठाया जाता है जो लोक-संस्कृति के अधिकतम् निकट होते है, तथा उसके प्रतिनिधित्व को पुरी तरह निभा सकते है। परम्परागत पारिभाषिक शब्दावली में ये व्यक्ति चरित्र नहीं - वर्ग चरित्र है। इन पात्रों की आँचलिक सर्व-साधारणता इनकी महत्वपूर्ण विशेषाता है। असाधारणत्व को यथासंभव बचाते हुए उनमें अँचल जीवन के वे सारे तत्व मिलते है, जो इन उपन्यासकारों के इष्ट है।

पात्र सम्बन्धि जो विशेषाता सर्वाधिक आकर्षक करती है वह है सभी पात्रों का समान महत्व। यह इन उपन्यासों को अन्य उपन्यासों से भिन्न कर देती है।आँचलिक जीवन को सम्पूर्ण आयाम सहित उजागर करने में किसी एक अथवा कुछ विशिष्ट पात्रों को प्रमुखता प्रदान करना बाधक हो जाता है। परिणामत: इन उपन्यासों में परम्परागत दृष्टि से` नायकशून्यता` या ` नायकत्व का अभाव` की असाधारणता दृष्टिगोचर होती है। कथाप्रधान उपन्यास में कथा की संघटना का चयन नायक करता है,चरित्र प्रधान में केन्द्र नायक होता है,उद्देश्य प्रधान में सिध्दान्त की व्याख्या का साधन नायक होता है, इस दृष्टि से यह उपन्यास विधा अद्वितीय है। इसमें नायक` व्यक्ति ` नहीं,` अँचल ` माना जा सकता है। नायक का आभास देनेवाला प्रमुख पात्र अँचल के असंख्य जन-समूह का प्रमुख प्रतिनिधि मात्र होता है ,वह भी महा-नायक अँचल के ही अधीन होता है।अँचल के सर्वाधिक एकरूपात्म होने के

कारण ही वह पात्र अनजाने ही प्रधानता प्राप्त कर लेता है। इन उपन्यासों में भी सभी तत्व `आँचलिक समग्रता` की कसौटी पर कसकर ही ग्रहण किए जाते हैं।

आँचलिक उपन्यास के पात्रों के रूपाकार में स्थानीय विशेषता और बहिरंग में स्थानीय वेशभूषा अनिवार्यत: परिलक्षित होती है। इन पात्रों में अँचल का अंतरंग आत्म और बाह्य जीवित रूपाकार का ही मानवीकरण होता है। इसीलिए वे जीवित और चेतन होते हैं। उपन्यास में अंकित जीवन को वे स्वयं जीते हैं, केवल प्रतिनिधित्व ही नहीं करते, वरन उसे गति भी प्रदान करते हैं।

पात्रों की अवतारणा में आँचलिक उपन्यासकार केवल वहीं तक स्वतंत्र होते हैं, जहाँ तक वे आँचलिकता के विरोधी नहीं होते, विरोध की संभावना होते ही महत्व आँचलिकता को ही प्राप्त होता है और पात्र का चरित्र, व्यक्तित्व उसी के अनुरूप ढालना पड़ता है। इन सभी विशेषा प्रवृत्ति के फलस्वरुप आँचलिक उपन्यासों में सशक्त चरित्र-विधान के अभाव की संभावना प्रतीत होती है। आँचलिकता की प्रतिबध्दता के कारण व्यक्ति-चरित्र को निखारने, संवारने की प्रवृत्ति और अवकाश दोनों ही नहीं होते। आँचलिक उपन्यास में पात्रों का योगदान किस तरह होता है इसके सम्बन्ध में श्री महेन्द्र ने अपना मत निम्नप्रकार से दिया है `जैसे विभिन्न मिट्टी के प्रकारों में लगाए गए पौधों में भिन्न-भिन्न सौन्दर्य और सुगंध होती है, वैसे ही नए और आकर्षक पात्र हमें आँचलिक उपन्यासों ने दिए।`[१]

४) उद्देश्य --

प्रत्येक कृति की रचना के पीछे एक उद्देश्य होता है। यही लेखक का जीवन दर्शन होता है, जिसे वह अपनी रचना में सम्मिलित करता है। यही आँचलिकता की

---

१ श्री महेन्द्र, हिन्दी उपन्यास, `सिध्दान्त और विवेचन`, पृ.१४०।

वास्तविक आवश्यकता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उपन्यासकार अपने अनुभव और आत्मीयता के आधार पर किसी कथा-भूमि का चयन करता है और उसमें अंचल की भौगोलिक संस्कृति के साक्षात का प्रयत्न करता है। शोषा विवरण उसके लिए गौण होते है।

अधिकांश आँचलिक उपन्यासकार अंचल के पिछडे या शोषित जातियों से सहानुभूति रखते है, इसलिए वे सर्वहारा के प्रति न्याय तथा उसके उत्थान के प्रयत्नों को तीव्रतर करने का स्वर देते है। इस वर्ग की पीडा लेखक के स्वर में मुखरित होती है। साथ-ही नवजागरण का संदेश और औद्योगिक जीवन के अनिवार्य संक्रामक तत्वों का विवेचन करते हुए वे किसी-न-किसी राजनैतिक `वाद` का समर्थन करते है।

५) <u>भाषा</u> --

साहित्यिक कलाकृति के निर्माण में जिस सामग्री का प्रयोग किया जाता है, उसे भाषा कहते है। आँचलिकता ने सबसे अधिक भाषा को प्रभावित किया है तथा उसे असाधारणता प्रदान की है। यह भाषा तत्व ही उसकी सिध्दि का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन बन गया है, वस्तुत: वातावरण, कथा और पात्रों की जो आँचलिकता के बाहर है, स्थानीय रंगत का आधार और साधन भाषा की आँचलिकता ही है। इन उपन्यासों में जनपदीय भाषा का व्यवहार - उपयोग दो रूपों में परिलक्षित हुआ है - पात्रो के संवाद (कथोपकथन) में और लेखक की भाषा शैली के रूप में।

(अ) <u>संवाद-विधान में आँचलिकता</u> --

इन उपन्यासों में संवाद कला का पूर्ण उपयोग किया गया है। वस्तुवर्णन को छोडकर सम्पूर्ण आयाम संवादो से ही ,निर्मित है। इस दृष्टि से इनका वैशिष्टय है` समूह संवादों` की संयोजना। यह कथोपकथन व्यक्ति का अपना-अपना किसी `स्क` का नहीं, सामुहिक समाज के शील का प्रकाशन करते है। इन उपन्यासों में जनपदीय शब्दों और भाषा का प्रयोग गुण-परिणाम दोनोंही दृष्टियों से इतना चकाचौंधपूर्ण है कि वे इस रूप में सबसे अलग दिखाई देते हैं। इसके द्वारा अभिप्रेत

आँचलिक जीवन के यथार्थ का रंग अत्यंत गाढा हो गया है - वह फुलम्पा पात्र नहीं रह गया है, वरन् जीवन की फुलभूत गहराईयों तक उतर गया है। संवादों की लोकभाषा के कारण इसके पात्र-चरित्र भिन्न, विशिष्ट तथा आंचलिकता का अधिकतम प्रतिभास दे पाए हैं। स्थानीय जनपदीय जीवन की आदिम लालसाएँ, प्रेरणाएँ, दैनंदनीय आवश्यकताएँ, खान-पान, पारस्पारिक सम्बन्ध, भावनाएँ, हास-परिहास, रीति-रिवाज, मनोरंजन की स्वाभाविक तथा पूर्ण अभिव्यंजनामें यह आँचलिक भाषा प्रयोग सर्वाधिक सफल रहा है।

(आ) भाषा शैली की आँचलिकता --

आँचलिक उपन्यास में केवल पात्रों की संवाद भाषा ही आँचलिक नहीं है वरन् लेखक अपनी अभिव्यक्ति की भाषामें भी आंचलिक शब्दों का प्रयोग कर सकता है। भाषा, साहित्य का उपर से आरोपित तत्व नहीं, सर्जन की आवश्यकता है। इन उपन्यासकारों का दावा है कि इस विधा में स्थानीय बोली का व्यवहार फैशन की प्रेरणा से नहीं, इसी सर्जना की अनिवार्यता का परिणाम है। जनपदीय वातावरण की सहज जीवन्तता का यथाशक्ति संरक्षक और प्रस्तुति के लिए जनपद बोलियाँ आवश्यक हो जाती है। शब्द, शब्द-समूह, मुँहावरें, कहावतें, विशिष्ट अभिव्यक्तियाँ आदि भाषा के तत्व स्थानीय जन-जीवन के संस्कार, अनुभूति-अनुभव और जीवन-सत्यों के साथ अनिवार्य और अभिन्न भाव से जुडे रहते है।

६) शैली --

इन उपन्यासों के शिल्प की विशेषता है, आँचलिक रंग। अँचल से सम्बन्ध लोक-तत्वों के द्वारा शैली का निर्माण करने के प्रयत्नों में अनेक प्रयोग सामने आए है। इन उपन्यासों में वस्तुत: शिल्प की संरचना में ही लोकतत्वों का पूर्णतम् उपयोग किया गया है। लोकगीत, कथा, नृत्य, तीज-त्योहार, लोकाचार, रीति-रिवाज, लोक-रंगमंच, पहेलियाँ, कहावतें, धार्मिक विश्वास, जादू-टोना, आदि सभी उपादानों की संयोजना द्वारा सम्पूर्ण आँचलिक जीवन को उभारकर उपस्थित करने का प्रयास

किया गया है। कहीं लोकगीत की एक कड़ी, कहीं पहेली, कहीं लोककथा का एक अंश सम्पूर्ण उपन्यास की नस-नस में रक्त-संचार-सा जीवन की सांस-सा रम जाता है। लोकतत्वों और उपादानों का ऐसा उपयोग इन उपन्यासों की अद्वितीय असाधारणता बन गया है।

(५) आंचलिक उपन्यास की विशेषताएँ --

आंचलिक उपन्यास की प्रवृत्ति के लक्षण उससे एक प्रकार से अभिन्न है, वे उसके अन्तरंग स्वरूप हैं। किन्तु विशेषताएँ उसका बाह्यांग है और वह विशेषताएँ उसका स्वरूप अधिकता से स्पष्ट करती है। किसी एक आंचलिक उपन्यास में अनेक विशेषताएँ प्राप्त हो सकती हैं। आंचलिक उपन्यास की निम्नलिखित विशेषताएँ नीचे दी जा रही है --

१) सीमित भौगोलिक परिवेश का अंकन (शहरी या ग्रामीण) -

हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में ग्रामीण एवं शहरी परिवेश का विस्तृत रूप से चित्रण किया गया है। वह इतना परिचित तथा असामान्य लगता है कि पाठकों के मन में उन्हें पढते समय विस्मय एवं कौतुहल की भावना जाग उठती है।

बहुत सारे आंचलिक उपन्यासों में ग्रामीण वातावरण एवं वहाँ के पिछड़े हुएँ लोगों का चित्रण किया गया है। नागरी संस्कृति से भिन्न इनकी नीजि विशिष्टतापूर्ण जनसंस्कृति होती है। इनकी रहन-सहन, वेशभूषा, बोली, खान-पान, प्रथा-परम्पराओं, विश्वासों आदि के द्वारा इनकी विशिष्ट जनसंस्कृति साकार होती है। `मैला आँचल`, `परती परिकथा`, `पानी के प्राचीर`, जैसे उपन्यास ग्रामीण परिसर एवं वातावरण को लेकर लिखे गएँ है। `कब तक पुकारूँ` में राजस्थान के करनट एवं खानाबदोश समाज का चित्रण है। इन पिछड़े हुएँ समाजों में नैतिकता के बन्धन बहुत शिथिल होते है। करनट जाति के पुरुष तो अपनी स्त्रियों के विवाह बाद एवं अनैतिक सम्बन्धो से पैसे कमाते है। भयानक दारिद्र,

शिक्षा एवं संस्कारों का अभाव,अन्य वर्गोंद्वारा शोषण और उत्पीडन,आपसी संघर्ष तथा मारपीट आदि में उनकी विवशता और पिछडापन प्रकट होता है। आँचलिक उपन्यासों में वर्णित जन-जीवन नागरी जीवन की तुलना में अपरिचित होता है। आँचलिक उपन्यासों में केवल ग्रामीण वातावरण या पिछडे हुएँ लोगों का ही चित्रण नहीं होता। यह तो संयोग की बात है कि अधिकांश आँचलिक उपन्यासों में इसप्रकार का जन-जीवन चित्रित है।

२) कौतुहल तथा आश्चर्य की भावना --

आँचलिक उपन्यासों में विभिन्न जातियों का सांस्कृतिक जीवन प्रस्तुत किया जाता है।कभी-कभी वह इतना असामान्य होता है कि पाठक उन्हें पढते समय भाव विभोर हो जाते है। कुछ उपन्यासों में वह भावना अन्त तकरहती है। ` कब तक - पुकारुँ `, सागर लहरें और मनुष्य,` जंगल के फूल` आदि उपन्यास इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं। कई विद्वान समीक्षकों का यही मत है। उसीकाल के घीसे पीटे नागरी जीवन से पाठक उब गएँ थे और उन्हें कुछ नए,अपरिचित जन-जीवन देखने-सुनने की इच्छा थी और वह इच्छा आँचलिक उपन्यासों ने पूरी की।

इस विस्मय की भावना का एक प्रमुख कारण है। इस ग्रामीण एवं पिछडे हुएँ जन-जीवन में जो स्वाभाविक जीवन-संघर्ष होता है,व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में जो नाट्यात्मकता होती है उसका सामान्य नागरी जन-जीवन में अभाव-सा होता है। नागरी जीवन नीरस,कृत्रिम,घिसा-पिटा एवं निर्जीव बनता जा रहा है।

३) जातीयता का चित्रण --

बहुत सारे आँचलिक उपन्यासों में जो जन-जीवन चित्रित किया है वह किसी विशिष्ट जाती का चित्रण है। ` कब तक पुकारुँ ` में करनटों का,` बलचनमा ` में मजदूरों तथा किसानों का,` वरुण के बेटे` और` सागर लहरें और मनुष्य ` में मछुओं का जन जीवन चित्रित किया है। गाँव में अनेक वर्गों एवं जमाती के लोग रहते हैं। वे अनेक वर्षों से एक दूसरे के साथ रहते आएँ है, फिर भी उनके आचार-विचार

अलग रहते है। इसके सम्बन्ध में डॉ.त्रिभुवनसिंह का मत इस प्रकार है --` प्रत्येक व्यक्ति में अपने जातीय संस्कार होते है। उन संस्कारों को समझने के लिए उन व्यक्तियों का विशेष अध्ययन आँचलिक उपन्यासों द्वारा संभव हो सकता है।`[१]

सारांश में, जातीयता आँचलिकता की विशेषता जरूर है किन्तु वह अनिवार्य लक्षण नहीं। जातीयता अर्थात केवल सामुहिकता नहीं है। जब सामुहिकता सजीव,प्रभावी, परिणामकारक एवं व्यक्तित्व युक्त बनती है, तब वह जातीयता की संज्ञा पाती है।सामुहिकता मूलत: निर्जीव एवं गुण रहित हो सकती है। किन्तु आँचलिकता के संदर्भ में उसे विशेष अर्थ प्राप्त होता है।

४) प्रगाढ स्थानीय रंग --

स्थानीय रंग इस शब्द को अंग्रेजी में पर्यायवाची शब्द Local Colour यह है। देश,काल का तत्व प्रत्येक सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों में पाया जाता है। प्रत्येक उपन्यास में वहाँ के स्थानीय वातावरण का चित्रण प्राकृतिक पार्श्वभूमि में किया जाता है। किन्तु यह वर्णन सामान्य होता है। जैसे` गोदान ` में वर्णित ग्रामीण जीवन एवं परिसर सामान्य है। वह उत्तर भारत के किसी भी सामान्य देहात का चित्रण हो सकता है। इसलिए वह सामान्य है,विशिष्ट नहीं। इसीप्रकार से सामान्य चित्रण से स्थानीय रंग या आँचलिकता की प्रतीति नहीं होती।

डॉ.श्रीनारायण अग्निहोत्री ने स्थानीय रंग का स्वरूप इसप्रकार बतलाया है ` किसी भी कथात्मक रचना में जब कथावस्तु को पृष्ठभूमि के विधान में भरपूर सूचना दी जाती है और वहाँ के वातावरण का निदर्शन स्थानगत भौगोलिक , सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों की समष्टि के समन्वय के रूप में प्रस्तुत की जाती है, तब उसे स्थानीय रंग देना कहते है।`[२]

---

१ डॉ.ह.के.कडवे ,` हिन्दी उपन्यासों में आँचलिकता की प्रवृत्ति ` -पृ.४०।

२ डॉ.श्रीनारायण अग्निहोत्री ,उपन्यास तत्व एवं रूपविधान - पृ. १३४ ।

12539
A

अ) स्थानीय रंग और आंचलिकता --

स्थानीय रंग और आंचलिकता में पर्याप्त अन्तर है। आंचलिकता जन-जीवन के प्रति एक निश्चित दृष्टिकोण या तत्व है बल्कि स्थानीय रंग यह एक उसकी विशेषाता है। इसके सम्बन्ध में श्री सीताराम चतुर्वेदी का मत है --" स्थानीय रंग की विशेषाता यह होती है कि इसमें नई या अपरिचित दृश्य सोजे जाते है या किसी परिवर्तनोन्मुख या -हासोन्मुख स्थान रूप का विवरण सुरक्षित किया जाता है, जैसे रूद्रजी की` बहती गंगा`, में। प्रदेशवादी तो प्रत्येक देश में ऐसी विभिन्न स्थितियाँ देखते है, जो वहाँ के निवासियों के जीवन पर बहुत प्रभाव डालती है और तदनुसार संस्कृति तथा चरित्र के विभिन्न साँचे उपस्थित करती है, किन्तु स्थानीय रंगकार किसी ग्राम दृश्य के प्रति पर्यटक का दृष्टिकोण उपस्थित करता है। कहा जाता है कि फ्रान्सिल होपकिंसन स्थिम ने स्थानीय रंग से मरे संयुक्त राज्य अमेरिका के अनेक भागों पर उपन्यास लिखे थे। अत: स्थानीय रंग का अर्थ हुआ - किसी कथा के मुलतत्व के रूप में नहीं, वरन् सजावट के रूप में उस कथा के लिए दृश्य, भाषा, वेश, आचार-विचार और व्यवहार का सटीक विस्तृत वर्णन देना।" १

आ) स्थानीय रंग और वातावरण निर्मिति --

वातावरण निर्मिति की प्रधानता आंचलिक प्रवृत्ति का एक लक्षाण है। वातावरण निर्मिति और स्थानीय रंग में भी पर्याप्त अन्तर है। आंचलिकता की प्रवृत्ति की दृष्टि से स्थानीय रंग की अपेक्षा वातावरण निर्मिति अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। उसका सम्बन्ध सीधे पात्रों के या लेखक के भावावेगों के साथ है। स्थानीय रंग बाह्यांग है तो वातावरण निर्मिति आंचलिकता के अंन्तरंग से सम्बन्धित है। इसीलिए हमने वातावरण निर्मिति को एक लक्षाण के रूप मे और स्थानीय रंग को एक विशेषाता के रूप में किया है। इसीलिए वातावरण निर्मिति के लिए स्थानीय रंग की आवश्यकता है।

---

१ डॉ.श्रीनारायण अग्निहोत्री-उपन्यास तत्व एवं रूपविधान - पृ.१३४।

५) लेखक का समाजशास्त्रीय एवं सौन्दर्यवादी दृष्टिकोण --

व्यक्ति-व्यक्ति के आपसी सम्बन्ध से जो परस्पर व्यवहार होता है, उससे सामुदायिक रूप से समाज की मनोदशा का परिचय होता है। व्यक्ति के आचार-विचार, रहन-सहन से जैसे व्यक्ति का परिचय होता है। उसी प्रकार सामुहिक रूप से समाज का भी परिचय होता है। समाज को विभिन्न प्रकार की समस्या को सुलझाने के लिए सम्पूर्ण आँचलोय परिस्थिति का विचार करना आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति का आचरण या उसके विचार आसपास के वातावरण पर निर्भर रहते है। उसी परिवेश का परिणाम सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक व्यापारों पर भी स्वाभाविक रूप से हो जाता है। आँचलिक उपन्यासों में चित्रित लोकजीवन के चरित्र का अध्ययन करते समय इस समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण को ध्यान में रखना आवश्यक है। मनुष्य मुलत: स्वभावगत दुष्ट नहीं होता। उसका आचरण आसपास के परिस्थिति पर अवलंबित रहता है।

सौन्दर्य का अर्थ है सुसंगति, सुसंवाद और प्रमाणबध्दता। सौन्दर्य अर्थात निर्दोषता सम्पूर्णता। साहित्य का उद्देश्य सौन्दर्य निर्मिति है। यह सौन्दर्य निर्मिति वाङ्मयीन सत्य के द्वारा प्रतीत होती है। साहित्य के द्वारा भावसत्यों का उद्घाटन होता है। सामान्यत: वह भावसत्य व्यक्ति निरपेक्ष एवं चिरन्तन मानवीय भावनाओं से युक्त होता है जिसमें मुलभूत रूप से स्वयंपूर्णता एवं सुसंगति होती है। सत्य ही सौन्दर्य और सौन्दर्य ही सत्य यह कीट्स का वचन उचित ही है।

६) राष्ट्रीय जन-जागरण की नई दिशा -

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत के सम्पूर्ण जन-जीवन में राजनीतिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन हो रहा है। लोकतंत्र के कारण प्रत्येक प्रौढ व्यक्ति को मत का अधिकार प्राप्त हुआ। जिससे राजनीतिक चुनाव को अत्यंत महत्व प्राप्त हुआ। चुनावमें सफलता पाने के लिए विभिन्न जन-जातियों में प्रचार

होने लगा । भारत धर्मनिर्विशेष राष्ट्र होने पर भी धर्म के नाम पर प्रचार होने लगा । राजनीतिक क्षेत्रों में स्वत्वहीन और स्वार्थी लोग आ रहे हैं । हर क्षेत्र में रिश्वतखोरी बढ रही है । इसी व्यक्तिगत एवं दलीय संघर्षों के फलस्वरुप कहीं-कहीं मारपीट एवं खून खराबा आदि हिंसक कृत्य हो रहे हैं ।

संक्षेप में, आँचलिक उपन्यासकारों ने विभिन्न जन-जातियों के चित्रण के माध्यम से उनकी परिस्थितियों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया । और लोगों को राष्ट्रीय जन-जागरण की नई दिशा की ओर प्रेरित किया ।

७) फोटोग्राफिक शैली --

उपन्यास की आँचलिक शैली का अर्थ कभी-कभी फोटोग्राफिक शैली किया जाता है । जिस प्रकार कोई फोटोग्राफर किसी दृश्य की तस्वीर खींचता है उसी प्रकार आँचलिक उपन्यासकार किसी घटना या दृश्य का तटस्थ वृत्ति से वर्णन करता जाता है । इसे स्नपशॉट भी कहा जाता है । एक आक्षेप उठाया जाता है कि फोटोग्राफिक चित्रण से एक तस्वीर का दूसरी से सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं होता । दूसरे शब्दों में उपन्यासों में अनेक दृश्य होते हुए भी एक का दूसरे से सीधा भावात्मक तथा सजीव सम्बन्ध निर्मित नहीं होता । इस फोटोग्राफिक शैली का दूसरा अर्थ है यथार्थवादी शैली । मानवीय व्यवहारों का अति यथार्थ वर्णन फोटोग्राफिक शैली की विशेषता है ।

८) व्यक्ति-चित्रण --

उपन्यास की जो परिभाषाएँ की गई है वह मानव जीवन से सम्बन्धित हैं । सामान्य तौर से व्यक्ति-चित्रण ही उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य माना गया है । उपन्यास में मानव-जीवन की घटनाओं का चरित्र-चित्रण की दृष्टि से सजीव वर्णन होता है । उपन्यास के पात्र दो प्रकार के होते हैं । व्यक्तिवादी तथा प्रतिनिधिक । व्यक्तिवादी पात्रों में अपनी व्यक्तिगत विशेषताएँ अधिक रहती हैं । वे उपन्यास में ऐसी क्रियाओं को करते हुएँ और सोचते हुएँ नहीं दिखाई जाते जैसे कि अधिकतर

व्यक्ति करते है । उसकी रहन-सहन ,सोचना-विचारना आदि दूसरे लोगों की रहन-सहन आदि से कुछ भिन्न प्रकार का अर्थात एक नयापन लिए हुए होता है । उसके इस चरित्र को उभरा हुआ और सुविकसित दिखाया जाता है, जिसके आधार पर उन्हें सर्वसाधारण के साथ नहीं लिया जा सकता । इन पात्रों का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व होता है । प्रतिनिधिक पात्रों में वे विशेषताएँ विशेष रूप से सामने लाई जाती है जो समाज के अन्य व्यक्तियों में भी सामान्य रूप से मिलती है । इस स्थान पर आकर पात्र समाज के एक प्रतिनिधि का स्वरूप धारण कर लेता है ।

९) लोकसाहित्य --

सामान्य तौर से लोक का अर्थ जनता किया जाता है, जिसमें सब वर्गों एवं स्तरों के स्त्री-पुरुष,सुशिक्षित-अशिक्षित,सुसंस्कृत -असंस्कृत,उच्चवर्गीय-निम्नवर्गीय लोग आते हैं।` लोकसाहित्य` में लोक शब्द का विशेष अर्थात् ` सीमित ` अर्थ अभिप्रेत है ।` लोक` का अर्थ है, सर्वसामान्य बहुजन समाज । मध्य एवं निम्नमध्य तथा निम्न वर्ग के लोक सामान्यत: इस शब्द से सूचित किए जाते है । लोकसाहित्य के सामान्य तौर से पाँच विभाग किए जाते है । १. लोकगीत २.लोकगाथा ३.लोककथा ४.लोकनाट्य और ५.लोकसुभाषित । इन पाँचों के माध्यम से लोक-साहित्य का गहन अध्ययन किया जाता है । आज लोक-साहित्य को अनन्यसाधारण महत्व है ।

निष्कर्ष --

द्वितीय अध्याय में हमने ` अँचल` शब्द की विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषा देखी है । सभी परिभाषाओं को देखने के बाद हम` अँचल ` शब्द की परिभाषा इस प्रकार करते है -` अँचल` याने किसी विशिष्ट भू-भाग का चित्रण हो है ।` आँचलिक` शब्द` अँचल ` शब्द से बना है , जिसका अर्थ कोई विशेष भूप्रदेश,जिसकी अपनी अलग विशेषता होती है । हिन्दी उपन्यासों में आँचलिकता की प्रवृत्ति प्रारंभिक काल से ही दिखाई देती है परन्तु उसका रूप अपरिपक्व था । इसके बाद आँचलिक उपन्यास के तत्व निम्नलिखित है --

१. आँचलिक देश, काल या वातावरण २. वस्तु और क्षेत्र ३. पात्र तथा चरित्र-चित्रण ४. उद्देश्य ५. भाषा और ६.शैली । उपन्यास के तत्व और आँचलिक उपन्यास के तत्वों में फर्क इतना है कि आँचलिक उपन्यासों में देश, काल यह तत्व प्राणतत्व के रूप में महत्वपूर्ण कार्य करता है । आँचलिक उपन्यासों की विशेषता यह उसका बाह्यांग है -- १. सीमित भौगोलिक परिवेश का अंकन २. कौतूहल तथा आश्चर्य की भावना ३. जातीयता का चित्रण ४. प्रगाढ स्थानीय रंग ५. लेखक का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण ६. राष्ट्रीय जन-जागरण की नई दिशा ७. फोटोग्राफिक शैली ८. व्यक्ति-चित्रण और ९. लोक-साहित्य आदि आँचलिक उपन्यास की विशेषताएँ है । इन विशेषताओं के बावजूद अन्य भी विशेषताएँ हो सकती है ।